International Journal of Jyotish Research: 2018; 3(2): 17-18

International Journal of Jyotish Research
(वेदचक्षु)

ISSN: 2456-4427
Impact Factor: RJIF: 5.11
Jyotish 2018; 3(2): 17-18
© 2018 Jyotish
www.jyotishajournal.com
Received: 16-05-2018
Accepted: 18-06-2018

डॉ. अशोक सैनी
संस्कृत राजस्थान विश्वविद्यालय
जयपुर, राजस्थान, भारत

Correspondence
डॉ. अशोक सैनी
संस्कृत राजस्थान विश्वविद्यालय
जयपुर, राजस्थान, भारत

वेदों में अहिंसा विषयक विचार

डॉ. अशोक सैनी

प्रस्तावना

वैदिक समाज में हिंसा में विश्वास नहीं था, इस बात का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि वह सभी के कल्याण के लिए प्रार्थना करता है। रूद्र से एक मन्त्र में मनुष्यों और पशुओं किसी की भी हिंसा न करने की प्रार्थना की गई है। [1] एक अन्य मंत्र में अग्नि से हिंसा रहित होकर रक्षा करने की प्रार्थना है–''हे अग्निदेव, हमारे ऊपर अनुग्रह करके सदा अवहित, मांगलिक आर सुख–कर आश्रय देकर हमारी रक्षा करो। सर्वजनवांछनीय अग्नि, उत्पन्न होकर तुम हिंसा रहित, अजेय और एकनिष्ठ भाव से हमारी रक्षा भली–भांति करो।'' [2]

इसी प्रकार राक्षसों और हिंसक पशु से रक्षा की प्रार्थना है। इनसे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि हिंसा बचने वाला ही अहिंसा की कामना करता है हिंसा में विश्वास रखने वाला तो मरने–मारने के लिए तैयार रहना है उसमें किसी के प्रति दया अथवा कल्याण की भावना नहीं होती।

वैदिक आर्य इसीलिए समाज में परस्पर मैत्री की भावना से रहने की कामना करते थे। वैदिक आर्यो की दृष्टिकोण था कि ''हम सबको मित्र की दृष्टि से देखें तथा सब प्राणी मुझे मित्र की दृष्टि से देखें।'' [3] मित्र की दृष्टि से देखने का अभिप्राय यही है कि जैसे मित्र अपने मित्र के सुख दुःख में काम आता है, आवश्यकता पड़ने पर उसकी सहायता करता है, उसे अच्छा परामर्श देकर सन्मार्ग की ओर प्रवृत्त करता है, सदैव उसका कल्याण ही सोचता है और कल्याण ही करता है, उसी प्रकार हम भी यदि मित्र की दृष्टि से सब प्राणियों को देखेंगे तो हिंसा, द्वेष और ईर्ष्या आदि का स्थान उदारता और प्रेम आदि भाव स्वयमेव ले लेंगे। वेद का इसीलिए यह कथन है कि ''मैं तुम्हारें मनों, व्रतों और चित्तों को संगठित करता हूं।'' [4] संगठन की वैदिक आर्यो में अपूर्व क्षमता थी। जब चित्त और मन एक होंगे तो सभी मनुष्यों की विचारणा–शक्ति एक सी होगी, लक्ष्य भी एक होगा, वेद यह भी कहता है–''मैं तुम्हें एक लक्ष्य और एक विचारों वाला बनाता हूं। [5] एक सा लक्ष्य और विचार ऐसे न हों जो समाज को पतन की ओर ले जाएं, परस्पर द्वेष भावना न हो। सभी के विचार उत्तम कोटि के न होकर अनैतिकता की भावना से युक्त हों तो समाज की प्रगति अवरूद्ध हो जाएगी और सभी सामाजिक जन दुःखी हो जाएंगे। वैदिक आर्यो की ऐसी अभिलाषा कभी नहीं रही, उनकी इच्छा तो एक ऐसे आदर्श समाज की स्थापना करने की थी जो शाश्वत हो जाए, सनातन हो जाए और युग–युग तक आने वाले समाजों के लिए उदाहरण रूप बनकर प्रेरणा देता रहे इसीलिए वेद–वाक्य सामाजिकों को प्रेरणा देता है–''मैं तुम्हें समान भावों, समान विचारों वाले और द्वेष–रहित बनाता हूं।'' [6] एक विचार वाले समान भाव वालों में भेद–भाव की आशंका ही नहीं रह सकती तभी तो वैदिक आर्यों की कामना थी ''तुम्हारा खान–पान साथ मिलकर हो'' [7] ''हम साथ मिलकर भोजन करने वाले हों।'' [8]

वैदिक समाज में सभी के सुख की कामना की जाती थी। किसी दूसरे को सुखी देखकर दुर्भावना भी हमारे हृदय में न आये सदैव यह अभिलाषा रहती थी [9] सम्भवतः इसीलिए वैदिक ऋषियों ने मन की शुद्धता पर अत्यन्त बल दिया। [10]

मन की इसी शुद्धता पर बल देने के कारण तथा दुर्भावनाओं से बचते रहने की आशंका के कारण उनके हृदय में श्रद्धा और पवित्रता का अभूतपूर्व सामंजस्य था।

वैदिक मानव धन की आकांक्षा तो रखता था परन्तु उसका साधन और उद्देश्य दोनों पवित्र थे। उसकी धनाभिलाषापूर्ण प्रार्थना देखिए–''हे देवपुत्री, उषा हमें धन देकर प्रभात करो। विभावरी उषा काल देवता प्रभूत अन्न देकर प्रभात करो। देवी दानशील होकर पशु रूप धन प्रदानपूर्वक प्रभात करो।'' [11] इसी प्रकार एक अन्य मंत्र में वरणीय सुखद और सुरूप धन की कामना है [12] परन्तु धन की कामना वे अपने अराध्य से इसलिए नहीं करते कि बिना कर्म किये ही देवता उनके घर में धन–वर्षा कर दें अपितु इसलिए आराध्य से याचना करते थे कि वे निराभिमानी थे वे कर्म करके भी प्राप्त होने वाली वस्तु को अपनी उदारता और निराभिनता के कारण ही ईश्वर की कृपा से प्राप्त मानते हैं। उनकी कामना कितनी श्लाध्य है कि हे अग्नि, हमारे जीवन के लिए सुन्दर ज्ञान युक्त सुखहेतुभूत और सारी आयु का पुष्टिकारक धन प्रदान करो। [13] इसी प्रकार उनकी धन की कामना अनेक मन्त्रों में परिलक्षित होती है,

परन्तु सामूहिक रूप से धन की कामना और उसका त्याग–भाव से उपभोग उनका सदा उद्देश्य रहा। वे कभी दूसरे के अन्न को चोरी से खाने की इच्छा नहीं रखते [14] दूसरे के धन के प्रति उनकी लोभ की दृष्टि कभी नहीं रही। [15]

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. ऋ0 1 ।143 ।8 ।
2. ऋ0 1 ।36 ।15 ।
3. वा0 सं0 36 ।18 ।
4. वा0 सं0 12158; तै0 सं 4 ।2 ।5 ।1; मै0 सं0 2 ।7 ।11; का0 सं0 16 ।11 ।
5. अथर्व0 3 ।30 ।7 ।
6. अथर्व0 3 ।30 ।1 ।
7. अथर्व0 3 ।30 ।6 ।
8. अथर्व0 6 ।47 ।1 ।
9. ऋ0 10 ।57 ।1; अथर्व0 13 ।1 ।59 ।
10. भ्रदं मनः–ऋ0 10 ।25 ।1; मनो अस्ति श्रुतं वृहत्–साम0 2 ।524; मनो जूति जुषाम्– वा0सं0 2 ।13; मनो दानाय सूरयः–ऋ0 1 ।48 ।4; मनो ज्योतिर्जुषतम्–तै0सं0 1 ।5 ।3 ।2; मनोदानाय चोदनम्–ऋ0 8 ।99 ।4; अथर्व0 20 ।58 ।2 ।
11. ऋ0 3 ।30 ।1; 1 ।48 ।1 ।
12. ऋ0 1́48 ।13 ।
13. ऋ0 1 ।79 ।9; साम0 1526; मै0सं0 4 ।10 ।6; 4 ।12 ।4; का0सं0 2 ।14 ।
14. अथर्व0 14 ।1 ।57 ।
15. वा0 सं0 40 ।1 ।